श्री गोकुलनाथजी के
चौबीस वचनामृत

श्रीनाथस्यस्थ विद्याविलासि गोस्वामितिलकायित
श्री १०८ श्री इन्द्रदमनजी (श्री राकेशजी)
महाराज श्री की आज्ञा से प्रकाशित

जगद्गुरु श्रीमद् वल्लभाचार्य वंशावतंस
आचार्य वर्य गोस्वामि तिलकायित

श्री १०८ श्री इन्द्रदमनजी (श्री राकेश जी) महाराज

नाथद्वारा

जन्मतिथि फाल्गुन शुक्ल ७
विक्रम संवत् २००६

प्राकट्य
२४ फरवरी १९५०

।। श्रीहरिः ।।

गो. श्रीगोकुलनाथजी के चौबीस वचनामृत

सम्पादक एवं संशोधक

त्रिपाठी यदुनन्दन नारायणजी शास्त्री

विद्या विभागाध्यक्ष

मन्दिर मण्डल, नाथद्वारा

प्रकाशक

विद्या विभाग, मंदिर मण्डल, नाथद्वारा

तृतीयावृत्ति
२००० प्रति

संवत् २०७३

न्योछावर १५/-

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषय सूची	पृष्ठ संख्या

।। श्रीहरिः ।।

श्रीगुसांईजी के चतुर्थ पुत्र श्री गोकुलनाथजी थे। ये अन्य भाइयों से अधिक विद्वान, सम्प्रदाय मर्मज्ञ तथा लोकप्रिय थे इनका साम्प्रदायिक अध्ययन पारम्परिक रूप से हुआ था।

पुष्टि सम्प्रदाय में श्री गोकुलनाथजी ने व्रजभाषा में वार्ता साहित्य का शुभारम्भ किया था। वह इनकी ही देन है और इनके कारण ही उस काल में व्रजभाषा गद्य की अभूत पूर्व उन्नति हुई थी। इस सम्प्रदाय में श्रीवल्लभाचार्यजी एवं श्रीगुसांईजी की तरह श्रीगोकुलनाथजी ने भी प्रचार तथा उसकी गौरववृद्धि करने में प्रमुखता से भाग लिया।

वेद शास्त्रादि का स्वाध्याय कर आपने सम्प्रदाय का गम्भीर अध्ययन किया। आपने चौबीस वचनामृत द्वारा पुष्टि भक्ति सेवा सिद्धान्त और वैष्णवों के आचरण को निरूपित किया है।

श्रीगोकुलनाथजी द्वारा रचित चौबीस वचनामृत गागर में सागर भरने की कहावत चरितार्थ होती है।

आप द्वारा रचित ग्रन्थों के लिए उक्ति है –

वचनामृत चौबीस किय दैवी जन सुखदान।
वल्लभ विट्ठल वारता प्रकट की नृप मान।।

विद्या विलासी गो. ति. श्री १०८ श्री राकेश जी (श्री इन्द्रदमनजी) महाराज श्री की आज्ञा से श्रीगोकुलनाथजी के वचनामृत को व्रजभाषा से राष्ट्रभाषा में अनुदित करने की आज्ञा मुझे प्राप्त हुई। तदनुसार भाषान्तर कर इसे विद्या विभाग ने प्रकाशित किया है। आशा है कि वैष्णव जन इस प्रथम संस्करण से लाभान्वित होंगे।

निवेदक

त्रिपाठी यदुनन्दन श्री नारायणजी शास्त्री
साहित्यायुर्वेदाचार्य, एम.ए. हिन्दी संस्कृत
विद्या विभागाध्यक्ष, मंदिर मण्डल, नाथद्वारा (राज.)

श्रीगुसांईजी के चतुर्थ कुमार श्रीगोकुलनाथजी कृत

२४ वचनामृत

।। मंगलाचरण ।।

नमामि गोकुलाधीशं लीला मानुष विग्रहम्।
व्रजाधीशं विश्विविभुं पार्वती प्राण वल्लभम्।।१।।
मायावादि चिद्रूपादि प्रतिबन्ध निवारकः।
दर्पहा दुर्मदांधानां पायाद्वो भक्त भूषणः।।२।।
नमामि श्रीपति देवं वल्लभं वल्लभात्मजं।
यः करोति सदाऽरण्ये मंगलं जनवर्जिते।।३।।
जयति विठ्ठलसुवन प्रकट वल्लभवल्ली।
प्रबल प्रनकरी तिलकमाल राखी।।४।।
वन्देऽहं गोकुलाधीशं भगवतं कृपानिधिं।
पावनो या मुनेजातः कलौघोरे द्विजेषुयः।।१।।
नमामि गोकुलाधीशं विश्वविभुं पार्वती प्राणवल्लभ्।।
जहाँगीरा द्रक्षिता मालाह्मधर्माद्रक्षिताजनाः।
चिद्रूपाद्रक्षिता धर्मो पातुवः पार्वतीपतिः
नमामि श्रीपतिदेवं वल्लभं वल्लभात्मजं।
यः करोति सदा रिष्ये मंगलं जन वर्जिते।।१।।
मायावादि चिद्रूपादि प्रतिबन्ध निवारकः।
दर्पहा दुर्मदांधानांधशयाद्वो भक्त भूषणः।।२।।

श्रीगोकुलेशजी के घर के प्रत्येक सेवकों को इस मंगला चरण के श्लोक का मुख्य पाठ करना चाहिए।

।। श्रीहरिः ।।

वचनामृत–पहला

एक समय पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों के विषय में श्रीगोकुलनाथजी ने श्रीगुसांईजी से पूछा, तब श्रीगुसांईजी चाचा हरिवंशजी तथा श्रीनागजी भट्ट आदि अनेक भगवदीयों के लिये आपने अपने श्रीमुख से पुष्टिमार्ग के सिद्धान्तों को कहा।

उनको सुनकर चाचा श्रीहरिवंशजी तथा श्रीनागजी भाई आदि अन्तरंग भगवदीय अपने मन में बहुत ही प्रसन्न हुए। उसके पश्चात् श्रीगोकुलनाथजी अपने बैठक में पधारे। श्रीगोकुलनाथजी श्रीगुसांईजी के वचनामृत तथा उनके अनुभवों, सिद्धान्तों को सर्वदा अपने मन में स्मरण कर मग्न रहते थे। उसी समय कल्याण भट्ट ने श्रीगोकुलनाथजी को दंडवत् की एवं उनके पास खड़े हो गये। परन्तु श्रीगोकुलनाथजी कुछ बोले नहीं, चार घण्टे बाद श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट की ओर देखा। कल्याण भट्ट ने श्रीगोकुलनाथजी को पुनः प्रणाम किया।

श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट से कहा कि तुम कब के आये हो कल्याण भट्ट ने उत्तर में कहा कि चार घण्टे हुए हैं, यह सुनकर श्रीगोकुलनाथजी अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा आज्ञा दी।

श्रीगुसांईजी ने अपने पुष्टिमार्ग के सिद्धान्तों को मुझ से कहा है वे तो अत्यन्त कठिन है। उन सिद्धान्तों का अनुसरण सरल नहीं है। यह जानकर कल्याण भट्ट ने श्रीगोकुलनाथजी से निवेदन किया कि जिन पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों (नियमों) का पालन हम कर सकें वो आप हमें बतावें।

आपके श्रीमुख से पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों को सुनने की बड़ी ही इच्छा है। पुष्टिमार्गीय रीति के अनुसार उनका अनुसरण करना तो अत्यन्त ही कठिन है किन्तु हमें तो उनका सुनना ही दुर्लभ लग रहा है।
कल्याण भट्ट की इस बात को सुनकर श्रीगोकुलनाथजी अत्यन्त प्रसन्न हुए। श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट को आज्ञा दी और कहा कि यह प्रसंग अन्य किसी को नहीं बताना। तुम भगवद् भक्त हो तथा तुम्हें पुष्टिमार्ग के सिद्धान्तों में अत्यन्त प्रेम है इसलिए मैं तुमको कहता हूं। उसको ध्यान पूर्वक सुनना तथा हृदय में धारण करना। श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट को भगवदीय जीव के लक्षण तथा पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों का इस प्रकार वर्णन किया।

अन्याश्रय नहीं करना, अन्याश्रय महाबाधक है आश्रय तो श्रीनाथजी का ही करना, श्रीनाथजी का आश्रय होने पर सभी कार्य होते हैं। लोक में सब जगह सुख प्राप्त होता है, यह जानकर आश्रय तो श्रीजी का ही करना श्रीनाथजी का आश्रय होने पर सभी कार्य होते हैं। लोक में सब जगह सुख प्राप्त होता है यह जानकर आश्रय तो श्रीजी का ही करना। आश्रय का कारण यह है कि अपने प्रभु के अलावा ओर किसी को न माने, दूसरे से भूलकर मनोरथ न करे, अन्य अवतार की अपेक्षा न रखे, जीव तथा देह इन दोनों में से किसी की अपेक्षा न रखे। यह बात तो अत्यन्त कठिन है क्योंकि यह संसार तो एक वृक्ष के समान है।

इस संसार रूपी वृक्ष में दो फल हैं वे कौन कौन से हैं एक दुःख स्वरूप अन्य सुख स्वरूप ये दो फल लगते हैं। संसार रूपी वृक्ष की शाखाएं तो अनेक हैं। अनेक शाखाओं के समान मन की तरंगे हैं, वृक्ष है वह मूल है। वृक्ष की जड़ बुद्धि है।

वृक्ष के फल गिरने से डरते हैं। मोह रूपी बयार (पवन) से डरते डरते

पेड़ की डाली, शाखा, फल, फूल टूटने से डरते हैं। अपने मुख्य तो वृक्ष की जड़ है, वह दृढ़ है इसलिये वृक्ष को डर नहीं है। पेड़ की डाल, शाखा, फल, पत्र, अपने मूल की दृढ़ता को जानती नहीं है। इसलिए अत्यन्त भयभीत होकर दुःखित होती है। वैसे ही यह जीव है। संसार रूपी वृक्ष को मोह रूपी बयार (पवन) का डर है उसका दुःख दूर करने को अपने मूल का विचार करना। अपने मूल तो भगवान् ही है।

जीव तो भगवान् को तो जानता नहीं है उनको तो भूल गया है। अविद्या के कारण ऐसा विचार रहता नहीं है कि हमारा मूल तो ईश्वर ही है। वह सर्वोपरि है तथा दृढ़ है हम को इस मोह रूपी बयार(पवन) की चिन्ता नहीं है। इतनी बुद्धि दुष्ट स्वभाव के कारण जीव की रहती नहीं है क्योंकि मोह रूपी बयार (पवन) के डर से भयभीत है। इस संसार में जीव अनेक प्रकार के दुःख सुखों को पाता है वैसे ही मनुष्य संसार में अहंता, ममतात्मक वृक्ष रूप है और डाल इसका कुटुम्ब है और शाखा इसकी स्त्री पुत्र परिवार है, पत्र मन तथा देह सम्बन्धी अनेक मनोरथ की तरंगे हैं। इसके फल दो हैं सुख, दुःख, मूल इसके भगवान् हैं।

अविद्या से मोह रूपी बयार (पवन) लगती है तब अपने मन में अत्यन्त भयभीत होता है और अपने मन में कहता है कि इस बयार से मैं गिरूंगा इस संसार के भय से अपने मूल भगवान् को भूल गया है। अपने कुटुम्ब, डाल, शाखाओं से लिपटता है तथा उनसे मिलकर अनेक प्रकार के दुःख सुख का अनुभव करता है। यह वृक्ष रूप मनुष्य की मायारूपी अविद्या को लगी है, मोह के कारण डरता है। मेरे कुटुम्ब, स्त्री पुत्रादि को दुःख होगा यह चिन्ता इसको मोह रूपी बयार (हवा) से लगती है। अपने तो मूल भगवान् हैं सो दृढ़ है मेरे को लौकिक, अलौकिक चिन्ता नहीं है इसको भूल जाता है।

लौकिक कुटुम्ब मिलकर इसको अन्याश्रय कराता है, इस प्रकार अन्याश्रय होने पर लौकिक में कोई कहता है कि तुम किसी देवता को मनाओ तुमको इससे सुख होगा, तुम्हारा भला होगा। कोई कहता है कि तुम्हें भला मित्र मिलेगा, तब तुम्हारा कष्ट दूर होगा। कोई कहता है कि देवी की मान्यता करने से भला होगा, ये दुर्बद्धि जीव, ऐसे ही करते हैं, तब यह जीव अन्याश्रय करके भगवान् से बहिर्मुख होता है।

मोहरूपी पवन कैसी है जो जीव में भ्रम पैदा करती है जो श्रीठाकुरजी का अनन्य भक्त है वह तो अन्याश्रय सर्वदा नहीं करता है ओर कभी कुछ लौकिक सुख–दुःख जीव को होता है तब वह दृढ़ता रखता है, जो श्रीजी करेंगे वह होगा मैं तो दास हूँ। सुख–दुःख तो प्रारब्ध से प्राप्त होते हैं वे तो देह को भोग करने पर ही छूटेंगे।

इस प्रकार दृढ़ता रखनी जो इस प्रकार की दृढ़ता रखता है उनका दुःख तत्काल निवृत्त हो जाता है। प्रथम तो भगवदीयों को दुःख होता ही नहीं है, अगर दुःख होता है तो भी पीछे के प्रारब्ध से होता है। भगवदीय तो दुःख को मानते ही नहीं है। इस प्रकार दृढ़ आश्रय श्रीठाकुरजी का करे, उसको भगवदीय कहो ओर जो वैष्णव होकर अन्याश्रय करता है, और असमर्पित वस्तु खाता है उससे श्रीमहाप्रभुजी बहुत दूर रहते हैं यह निश्चय जानना। यह समझकर वैष्णव के यह योग्य है सो अन्याश्रय नहीं करना। असमर्पित वस्तु नहीं खाना। इसीलिये अपने मन में दृढ़ आश्रय एक श्रीजी का ही करना, तब वैष्णव इस लोक ओर पर लोक में सुख पाता है इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति कहा।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत प्रथम वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–दूसरा

अब दूसरे वचनामृत में श्रीगोकुननाथजी कल्याण भट्ट के प्रति कहते हैं कि सभी वैष्णावों को प्राणी मात्र के उपर दया रखनी, चींटी हो या हाथी सभी में एक समान जीव जानना। छोटे बड़े सभी जीव प्रभु के बनाये हुए हैं। अन्तर्यामी प्रभु सभी में एक ही हैं किन्तु प्रतिबिम्ब सभी में भिन्न भिन्न दिखाई देते हैं। यह जानकर भगवदीय जीव हिंसा से अत्यन्त डरता रहे। अपने को शीत, उष्ण सब का विचार करना, किसी भी जीव के हृदय को दुःखी नहीं करना, मन, वचन और शरीर से सबका हित करना।

वैष्णव होकर प्राणी मात्र उपर दया का भाव रखना। यह श्रीगोकुलनाथजी ने वैष्णव को आज्ञा दी है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत दूसरा वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–तीसरा

तीसरे वचनामृत में श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट से कहते हैं कि वैष्णव सदा प्रसन्न रहे तथा सुख दुःख को समान समझे, सुख से हर्ष दुःख से क्लेश हो ऐसा न करे, वैष्णव से दीन होकर प्रीति रखे। अहर्निश श्रीजी में ध्यान रखे, धन का उपयोग सुमार्ग, गुरू सेवा, वैष्णव सेवा में करे, अपने शरीर के भोगार्थ में उपयोग न करे, किन्तु लौकिक एवं वैदिक कार्य आवश्यक हो तो प्रभु को धन समर्पित कर आज्ञा लेकर काम में लेवे। वैष्णव के संमुख मान का परित्याग कर उनके पास जाये। निःसंकोच होकर भगवद् स्मरण करे, संकोच से भगवद् धर्म बढ़ता नहीं है जहाँ सन्देह है संदेह निवृत्ति का उपाय करे, इससे प्रीति बढ़ती है और ज्ञान होता है किसी का बुरा न हो, दुःख में

धैर्य रखना इस प्रकार के जीव को उत्तम वैष्णव जानना इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट को आज्ञा दी।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत तीसरा वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–चौथा

श्रीगोकुलनाथजी अब वैष्णवों का चौथा लक्षण कहते हैं कि भगवदीय क्रोध नहीं करे, क्योंकि उसका कारण यह है कि क्रोध चाण्डालका स्वरूप है जहाँ पर क्रोध होता है वहाँ भगवद् धर्म तथा भगवान् नहीं रहते हैं क्रोध जहाँ होता है वहाँ से भगवद् धर्म चला जाता है। क्रोध अग्नि स्वरूप है भगवद् धर्म का नाश करता है जिसको बहुत क्रोध होता है वह क्रोधावेश में अशुद्ध रहता है जैसे चाण्डाल के स्पर्श से सचैल स्नान करना पड़ता है अगर सचैल स्नान न करे तो कम से कम हाथ पैर तो अवश्य धोना, तथा सोलह कुल्ला करना, चरणामृत लेकर मन में जब शान्ति हो तब क्रोधावेश से छूटता है। भगवद् धर्म, भगवत् स्मरण पवित्र होकर करे। क्रोधा वेश में यदि शरीर छूटता है तो नरक में पड़ता है तथा अधोगति होती है। क्योंकि कहा है– ''तामसानां अधोगतिः'' बिना कारण, भगवद् सेवा सम्बन्ध बिना क्रोध करे तो श्वान (कुत्ते) की योनि में जाता है। लोभ से किसी के द्रव्य (घन) को चुराता है और पूछने पर क्रोध करता है वह सर्प योनि को पाता हैं।

किसी वैष्णव से ईर्ष्या करके भगवद् धर्म, कीर्तन आदि में प्रतिबन्ध करके छुड़ाता है वह कुम्भी पाक नरक का कीड़ा साठ हजार वर्ष तक रहता है, इसके पश्चात् वह सूकर, कूकर, सर्प आदि यानियों को प्राप्त करता है।

इसलिये भगवद् धर्म सम्बन्धी वार्ता भले ही साधारण ही हो उसमें विघ्न नहीं करना। क्रोध, ईर्ष्यावश किसी के घर में आग लगाता है वह तीनों पाप कर नरक में पड़ता है। ईर्ष्या एवं क्रोध से किसी को विष देता है अथवा जल में डुबाता है, तथा शस्त्र से अपघात (मारता) है वह नर्क भोग में सर्प योनियो को प्राप्त करता है।

दशगुणा प्रायश्चित करने पर वह शुद्ध होता है। क्रोध सभी धर्मों में बाधक है। महा दुर्बुद्धि (खोटी बुद्धि) होकर अज्ञान से क्रोध करता है, इसलिये मन लगाकर क्रोध का निवारण करना, भगवद् इच्छा रूपी खड्ग (तलवार) से दूर करना। क्रोध करके यदि गुरू निन्दा करे तथा कठोर वचन बोले वह मूषक (चूहा) की योनि प्राप्त करता है, मूषक से सर्प योनि को प्राप्त करता है। सर्प से प्रेत योनि की प्राप्ति होती है।

भगवद् अर्थ के बिना माता, पिता से क्रोध करता है वह दरिद्र होता है। वैष्णव से क्रोध करता है उसका सारा सुकृत धर्म का नाश होता है। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट को आज्ञा की कि क्रोध ''महादोष'' है। कहने मात्र से इससे पार नहीं पाया जा सकता है, इसलिये सावधान रहना चाहिये।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत चतुर्थ वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–पांचमां

श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट के प्रति वैष्णवों का पांचवां लक्षण बताते हैं कि वैष्णव होकर एक श्रीभगवान् का ही आश्रय जाने भगवद् सेवा के विषय में एकाग्र चित्त रखे, परम फल रूप जाने।

वैदिक, लौकिक मन की चंचलता न रखे। श्रीजी के स्वरूप और श्रीभागवत् में तथा पुष्टिमार्ग ग्रन्थों में कहा है उनका दर्शन कर हृदय में ध्यान करे, जैसे भगवद् नाम स्मरण करे वैसे ही अपने गुरू के नाम को हृदय में स्मरण कर जपे।

भगवद् कटाक्ष, अंग, वस्त्र, आभरण में अपना मन लगाकर चिन्तन (ध्यान) करे। श्रीठाकुरजी की अनेक लीलाएं हैं उनका चिन्तन (ध्यान) करे। भगवद् नाम बिना जो समय (क्षण) बीते हृदय में विचार कर दुःख माने। अस्पर्श में स्नानकर चरणामृत तथा श्रीयमुनाजी की रज मुख में रखे।

रज को दोनों नेत्रों से लगाकर मस्तक पर धारण करे। हृदय पर लगावे। जब अलौकिक धर्म की दृष्टि होती है तब भगवद् धर्म मस्तिष्क में आता है हृदय शुद्ध हो तब भगवद् मन्दिर में जावे, छोटी मोटी सेवा अपना भाग्य मान कर करे। पात्र को शुद्ध करे, मंगलभोग धर कर शय्या संभाल कर फिरावे। मंगल आरती कर, तिथि, वार, उत्सव देखकर अभ्यङ्ग. करावे। जैसा स्वरूप हो तदनुसार तिथि ऋतु के अनुरूप शृंगार करे।

सेवा शृंगार के विषय में चित्त में उद्वेग, संकल्प, विकल्प न करे और अपने मन में अपराध का भय रखे। श्रीमहाप्रभुजी की कृपा से अपना भाग्य जान कर सेवा करे। मंगला, राजभोग, उत्थापन, शयन कराकर सांकल लगाकर वस्तु सामग्री का ध्यान रखे।

वैष्णवों से मिलकर रात्री में भगवद् वार्ता, कीर्तन अवश्य करे। यदि वैष्णव न मिले तो एतन्मार्गीय ग्रन्थों की टीका देखे, एतन्मार्गीय वैष्णवों में

जाकर वार्ता करे, सुने, सेवामें जैसे आलस्य न करे उसी प्रकार वैष्णव मिलाप में आलस्य न करे।

दो वैष्णव जब मिलते हैं तो भक्ति बढ़ती है अगर भगवद् सेवा नहीं हो तो भी वैष्णवों का संग न छोड़े। दैन्यभाव हो। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने वैष्णवों को आज्ञा की है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत पंचम वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत—छट्ठा

श्रीगोकुलनाथजी वैष्णव का छट्टा लक्षण कहते हैं कि जो वैष्णव सेवा, भगवद् स्मरण, भगवद् धर्म इनमें पाखण्ड नहीं करे और किसी के दिखाने के लिये पूजा तथा धन उधार लेकर पूजा न करे।

अपने सहज धर्म को जाने। ब्राह्मण गायत्री जप, लाभ संतोष से सेवा करे। "एक कालो द्विकालोवा" विवेक (ज्ञान) बिना पूजा, सेवा करे तो नर्क में पड़ता है। पाखण्डी की सेवा, पूजा प्रभु अंगीकार नहीं करते हैं। इस प्रकार से श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट को कहा।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत छटा वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत—सातमां

श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट के प्रति वैष्णवों के लिये सातवां वचनामृत कहते हैं कि वैष्णव होकर किसी अपराध को नहीं देखे अथवा सुने भी नहीं, यद्यपि कानों से सुनना आंखों से देखना पड़े तो इसमें रंच मात्र भी मन में नहीं लावे। यह समझे कि मायावाद रूपी अविद्या में मैं पड़ा हुआ हूँ

इस कारण मुझे अपराध देखने या सुनने पड़ रहे हैं। इसमें रंच मात्र भी दोष नहीं है, हमेशा उत्तमोत्तम देखे। मध्यम देखकर कहे, दुष्ट झूंटी सांची लगाकर ईर्ष्या करे, कोई बुरा कार्य करे, अपराध करे तो भी उसको भूल जाये, उसको प्रसन्न कर संकोच छुड़ावे। अच्छा कार्य हो तो गुणों को प्रकाशित करे। अगर इस प्रकार चले तो प्रभु कृपा कर अपनी भक्ति का दान करते हैं, इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति पुष्टिमार्गीय सिद्धान्त का वर्णन किया है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत सप्तम वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–आठमां

श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट के प्रति आठवां लक्षण कहते हैं– जो वास्तव में वैष्णव होता है वह सच्चा होता है। लौकिक अलौकिक में कपट नहीं रखे। भगवदीयों से मिथ्या भाषण नहीं करे। वैष्णव भगवद् चर्चा करे, उनके ह्दय का भाव तथा पुष्टिमार्ग के सिद्धान्त को अपने ह्दय में धारण करे और बारंबार अपने मन में विचार भगवद् वार्ता को हेतु समझे, भगवदीय से दीन हो कर रहे। भगवदीय के आगे अपनी बड़ाई नहीं करे। भगवदीय की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे। उनसे स्नेह बहुत रखे श्रीठाकुरजी की लीला वार्ता का प्रकाश न जानता हो तो दीन भाव से भगवदीय से पूछे। अपनी योग्यता नहीं बताना। भगवदीय के आगे भगवद् वार्ता एवं चर्चा करनी, इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट को आज्ञा की।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत अष्टम वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–नवमां

श्रीगोकुलनाथजी और आज्ञा करते हैं कि जो कोई निंदा, दुर्ववचन कहे उसका उत्तर नहीं देना। सब सहन करना। अपने में ही दोष जान कर उन पर क्रोध नहीं करना। अपने मन में भी खेद नहीं करना। उनसे बहुत विरोध हो तो नेक दूर करना। उनके कृत्य को देखकर दोष बुद्धि में खेद नहीं करना। उनसे जय श्रीकृष्ण का व्यवहार रखना। उनकी निन्दा नहीं करना, इस प्रकार से वैष्णव के अपराध से डरते रहना। इस प्रकार डरते रहने से उसका सर्वकार्य सिद्ध होता है। प्रभु कृपा कर हृदय में पधारें, निन्दा सहनी यह वैष्णव का सर्वोपरि परम धर्म है इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति आज्ञा की है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत नवम वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–दशमां

अब और श्रीगोकुलनाथजी वैष्णव का दशमा लक्षण कहते हैं कि श्रीठाकुरजी की सेवा किसी के भरोसे न रखे, अपने सेव्य स्वरूप की सेवा स्वयं ही करे। उत्सवादि समय अनुसार तथा अपने चित्त के अनुसार वस्त्र आभूषण, भांति भांति के मनोरथ कर सामग्री बनावे। श्रीठाकुरजी के यहां नित्य नियम, नूतम उत्सव जानकर प्रसन्न रहे। अमंगल तथा उदासीन कभी न रहे। सामग्री जिस उत्सव में अपने घर की रीति है उसी रीति के अनुसार यथा शक्ति करे। धन को श्रीठाकुरजी के लिये लगावे। कृपणता नहीं करे।

भगवद् सेवा करके श्रीठाकुरजी से कुछ भी नहीं मांगे। इस प्रकार से

निष्काम होकर श्रीठाकुरजी की सेवा करे। जनना शौच या मरणाशौच आ जावे, रोगादि प्रतिबन्ध आ पड़े तो सुजाति वैष्णव से सेवा करावें। सुजाति वैष्णव नहीं हो तो मर्यादा वैष्णव को कुछ द्रव्य (धन) देकर सेवा करावे।

यदि मर्यादामार्गी वैष्णव न मिले तो समर्पित वैष्णव से सेवा करवा ले। समर्पित वैष्णव भी गांव में नहीं होतो नामधारी वैष्णव से सेवा करावे। समर्पित सेवा करवाते समय कपड़े की थैली हाथ में पहराकर श्रीठाकुरजी की सेवा करावे।

श्रीठाकुरजी का साक्षात् स्पर्श नहीं करवावे। समर्पी की सखड़ी या अनसखड़ी श्रीठाकुरजी अरोगे परन्तु आप नहीं लेवे। किन्तु प्रतिबन्ध आ पड़े तो प्रसाद ले लेवे। प्रतिबन्ध जब छूट जाय तब व्रत करे। भेंट निकाले तब श्रीठाकुरजी का स्पर्श करे। अन्यमार्गी से श्रीठाकुरजी की सेवा कभी भी नहीं करावे।

यदि नामधारी नहीं मिले तो स्वयं ही नवीन पट वस्त्र से सामग्री धरे। श्रीठाकुरजी पोढ़े हुए ही सामग्री अरोगे किन्तु अन्य मार्गी से सेवा नहीं करावे। शरीर सर्वथा अशक्त हो जावे तो गांव के वैष्णव या अन्य गांव के वैष्णव के यहां श्रीठाकुरजी पधारा देने। मन में भगवद् सेवा नहीं होने की पश्चाताप करता रहे।

मानसी सेवा पूर्व में की हो उसी प्रकार सेवा का स्मरण करे। मानसी सेवा दो प्रकार की है। पहली सेवा से श्रीठाकुरजी का ध्यान करे। श्रीठाकुरजी श्रीआचार्यजी श्रीगुसांईजी के बालक जिनसे ब्रह्मसम्बन्ध (समर्पण) किया हो उन गुरू का श्रीजी का तथा सातों स्वरूप अपने गुरू के सेवा रूप हो उनका नियम पूर्वक अन्तःकरण से दण्डवत् करे। पीछे मन से मंगलभोग धर कर मंगला आरती करे।

पश्चात् अभ्यंग स्नान, अंग वस्त्र, आभूषण, ऋतु के अनुसार धारण करावे। इस प्रकार राजभोग, उत्थापन, शयन पर्यन्त की सेवा की भावना करे। मन में संतोष नहीं करे, तथा यह विचार करे की मेरे से साक्षात् हाथ से श्रीठाकुरजी कब सेवा करवायेंगे। सेवा में एकादश इन्द्रियों का विनियोग होता है इसके लिये दुःख का अनुभव करे। इस प्रकार से जो रहता है वह उत्तम वैष्णव है। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति कहा।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत दशम वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–ग्यारहमां

अब ओर आगे श्रीगोकुलनाथजी वैष्णव का ग्यारहमा लक्षण कहते हैं– वैष्णव प्राणी मात्र पर दया रखे, वैष्णव अपने घर पर आवे तो प्रसन्न हो तथा यह माने की वैष्णव के रूप में श्रीठाकुरजी ही पधारे हैं। वैष्णव (प्रभु) थक गये हैं यह जानकर तेल लगाकर गरम पानी से स्नान करावे। सुन्दर ऋतु के अनुसार वस्त्र पहराकर अनेक प्रकार से महाप्रसाद लिवावे। सामर्थ्य हो तो उनका सम्मान कर प्रसन्न करे।

किन्तु किसी से उधार लेकर सम्मान न करे। ऋण हत्या के समान जाने। किसी को दुःख देकर कार्य नहीं करे। वैष्णव इसी भाव से रहे। अन्यमार्ग के ठाकुरजी की सेवा नहीं करे। बिना मर्यादी के श्रीठाकुरजी के पास नहीं बिठावे। अपने श्रीठाकुरजी की सामग्री बिना मर्यादी को नहीं देवे, प्रसादी सामग्री हो वह बिना मर्यादी के श्रीठाकुरजी के भोग धरे वह प्रसाद मर्यादी न लेवे।

श्रीठाकुरजी के लीला के भाव को अन्यमार्गी तथा पात्र बिना नहीं कहे। पुष्टिमार्ग में जो अनन्य हो उनसे मिलकर निवेदन तथा लीला भाव का स्मरण करे। अपने गुरू ने अष्टाक्षर, पंचाक्षर, मंत्र दिया हो तो उनको बिना सत्पात्र के प्रकाश में नहीं लावे।

अपने श्रीठाकुरजी की सेवा जहां तक बन सके ओर के घर नहीं पधरावे। अपने घर श्रीठाकुरजी की सेवा की सुविधा तथा सामर्थ्य न हो तो ओर के घर जाकर दो घड़ी सेवा करे।

रंचक बनकर नियमपूर्वक सेवा करे। भगवदीयों का संग नियमपूर्वक करे। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट को पुष्टिमार्गीय सिद्धान्त कहा।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत एकादश वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत—बारहमां

अब श्रीगोकुलनाथजी द्वादश वचनामृत में कहते हैं कि वैष्णव अपने सेव्य स्वरूप को साक्षात् श्रीपुरूषोत्तम जानकर सेवा करे और अन्य मार्गीय ठाकुर को अपने श्रीठाकुरजी के बराबर नहीं जानें हस्ताक्षर वस्त्र सेवा, चित्र सेवा में अन्य भाव नहीं जाने साक्षात् जानकर अपराध का भय रखे। गृहस्थ धर्म सेवार्थ जाने, अपने सुखार्थ नहीं जाने। अपनी देह को अनित्य जाने, तथा श्रीठाकुरजी की देह को नित्य जाने। श्रीठाकुरजी की देह तथा भगवदीय की देह को अनित्य नहीं जाने। लौकिक सुख तुच्छ जाने। भगवद् सेवा में प्रीति रखे तथा श्रीठाकुरजी से विशेष प्रीति रखे।

लौकिक एवं वैदिक वस्तु में प्रीति न रखे, पराई वस्तु, पराई सत्ता में लोभ नहीं रखे। कुछ प्राप्ति पर सुख नहीं माने न कुछ हानि पर दुःख माने। गृहस्थ धर्म शास्त्र किसी से सुनकर लौकिक में लीन नहीं हो जावे।

पुष्टिमार्गीय सम्बन्धी शास्त्र के वचनों का निरन्तर विचार करता रहे। सभी शास्त्र पुष्टिमार्ग से अंतराय करने वाले हैं यह निश्चय जाने। भगवद् कार्य, गुरूकार्य, वैष्णवकार्य में मन रखे जैसे जल से कमल अलग है वैसे ही लौकिक, वैदिक से अलग रहे।

भागवत् तथा श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ को भगवद् स्वरूप जाने। श्रीसर्वोत्तमजी का पाठ, जप, मन लगाकर करे। यह पुष्टिमार्गीय वैष्णवों की गायत्री है इसलिये सारे प्रतिबन्धों को दूर कर पुष्टिमार्ग के फल को पावे। श्रीयमुनाष्टक आदि के पाठ नित्य करने, श्रीसर्वोत्तमजी के पाठ, जप नियमपूर्वक करे। गद्य के श्लोक का भाव विचार कर मन में ताप, क्लेश करे। सदा पवित्र रहे। कुचैल मनुष्य के स्पर्श में भी ग्लानि रखे। वैष्णव के वस्त्रों से बहुत ग्लानि नहीं रखे।

अलौकिक देह में लगा रहे। किसी को दिखाने के लिये बड़ी अपरस न रखे, जहां तहां विचार किये बिना खान पान न करे, इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी आज्ञा करते हैं।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत द्वादश वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–तेरहमां

श्रीगोकुलनाथजी तेरहमां वैष्णव का लक्षण कहते हैं भगवदीय वैष्णव किसी से विरोध नहीं रखे, जहां क्रोध की वार्ता हो वहां खड़ा भी नहीं

रहे। सभी से सर्वात्मभाव से हित रखे। उनकी बात झूंठी हो और अपने कहने से खेद (दु:ख) हो वह भी नहीं करे। इसी प्रकार विवेक पूर्वक चले उसको भगवदीय जाने। वैष्णव की निंदा करे तो नरक में पड़े। वैष्णव कुमार्ग पर चले तो उसको समझावे। मन में दोष रखकर निंदा नहीं करे। पुष्टिमार्ग की रीति के विपरीत चले उसको वैष्णव नहीं जाने। यद्यपि बड़ा पण्डित हो, समझदार हो, परन्तु उसको अपने सम्प्रदाय का ज्ञान न हो, उसका संग बड़ा दु:खदाई है। थोड़ा समझे परन्तु पुष्टिमार्ग में तत्पर हो उसका संग हितकारी है। वैष्णव निंदा से कोटि कोटि अपराध से दु:खी होता है।

वैष्णव होकर लौकिक वस्तु में तृष्णा न रखे, कामना से दुर्बुद्धि होती है तथा तृष्णा से केवल स्वार्थ एवं तृष्णा से भला बुरा नहीं सूझे। केवल स्वार्थ हो तब प्रसन्न, स्वार्थ हानि पर निंदा सूझे। तृष्णा से मन में संकल्प, विकल्प उठे तब अपने धर्म को भूल जाता है। मन में अनेक प्रकार की लोभ तरंगे उठती हैं इसलिये लोभ से भला–बुरा कार्य नहीं सूझता। विवेक, ज्ञान सब जाता रहता है तब झूंठी बात को सच्ची बनाकर अपने कार्य में तत्पर रहता है। द्रव्य (धन) वस्तु लेने में भय (डर) नहीं करता है।

द्रव्य (धन) की रक्षा के लिये अनेक यत्न करता है। वैष्णव को लोभ–तृष्णा करना उचित नहीं है। वैष्णव का अपराध होगा तभी श्रीठाकुरजी अप्रसन्न होंगे। यह काल (मृत्यु) सारे जगत को ग्रस लेता है। मेरे को भी काल ग्रस जायेगा। इसलिये लौकिक, वैदिक में आसक्त नहीं हो। आसक्ति बिना नहीं चले तो यह आसक्ति सहज नहीं बने वह उपाय करे। किन्तु मन से आसक्त न रहे। मन में यह भी जाने की धर्म के बिना कोई सहायक नहीं है। अपना वैष्णव धर्म गया तो सब गया, वैष्णव धर्म पर दृढ़ता होंगी तो श्रीठाकुरजी सहायता करेंगे।

धर्म गया और कुछ लौकिक सिद्ध हो गया तो लौकिक सुख चार दिन में चला जायगा। धर्म हानि से परलोक बिगड़ जायेगा। इसलिये भगवद् धर्म के माहात्म्य को हृदय में रखकर केवल श्रीठाकुरजी का आश्रय करे। स्वार्थ से धर्म की हानि तथा लौकिक विषयादि सुख के लिये स्वार्थ करे तो धर्म हानि होगी।

श्रीठाकुरजी से अधिक गुरू में प्रीति रखनी क्योंकि यह जाने कि जो कुछ हुआ है वह गुरू कृपा से हुआ है और आगे जो होगा वह भी गुरू की कृपा से होगा। वह तो योगेश्वर के प्रसंग में कहा है कि श्रीठाकुरजी में बड़ी प्रीति न हो तथा गुरू के विषय में गुरू भाव न हो वैष्णव के विषय में दया नहीं हो, सब राख में होम (यज्ञ) के समान है।

वैष्णव तथा गुरू का समाधान प्रभु साक्षात् अपना ही मानते हैं। वैष्णव से मिलकर अपने जन्म जन्म के प्राण प्रिय श्रीठाकुरजी उनका स्मरण करे। मन में मनोरथ रखे कि श्रीठाकुरजी कब प्रसन्न होंगे। लौकिक कार्य न रखे। श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति वैष्णवों के लिये इस प्रकार शिक्षा दी है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत त्रयोदश वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–चौदहमां

अब श्रीगोकुलनाथजी चौदहवां लक्षण कहते हैं जो वैष्णव लौकिक वैदिक कार्य, देह कार्य इनको अनित्य जाने। पुष्टिमार्ग के धर्म को सत्य जानकर कार्य में तत्पर रहे और कोई धर्म तथा लौकिक कार्य तुच्छ मान दुःख

रूप जाने। तीर्थ का माहात्म्य सुन मन के सेवा स्मरण से नहीं चलता, तीर्थ के फलको तुच्छ जाने, गंगाजी तीर्थ के समान जगत में कोई तीर्थ नहीं। इसको "रूक्मिणी मन ही न लाई"

वेद पुराण, शास्त्र श्रीभागवत् गीता इनके वचन सत्य जाने परन्तु अनेक प्रकार के अधिकारी हैं। अधिकारी है उनके अर्थ जानना और पुष्टिमार्ग के वचन तथा धर्म मन में रखना। अनेक प्रकार के फल तुच्छ कर जाने और जयन्ती आदि एकादशी सत्य जानना, परन्तु फल की कामना मन में न रखना। भगवद् सेवा स्मरण सर्वोपरि जान लौकिक विषय के अर्थ स्त्री को न जानना। विषय भगवदीय पुत्र होने के अर्थ में करे। भगवद् सेवा अर्थ स्त्री में प्रीति रखे, भगवदीय से भगवद् वार्ता दैन्यपूर्वक करे, अपनी उत्कर्षता न बतावे। अपने को ज्ञान नहीं हो तो शुद्ध भाव से प्रश्न करे भगवद् भाव की वार्ता अपने मन में दृढ़ विश्वास कर रखे। उन भगवदीय की लौकिक चेष्टा न देखे। भगवद् धर्म ह्रदय में दृढ़कर के रहे। इस प्रकार से श्रीगोकुलनाथजी ने आज्ञा की है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत चौदहमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–पन्द्रहमां

अब और श्रीगोकुलनाथजी पुष्टिमार्ग के सिद्धान्त को कहते हैं– वैष्णव को लौकिक में आतुरता नहीं रखनी, लौकिक आतुरता से सेवा के विषय में उद्वेग हो, तब प्रभु प्रतिबन्ध करते हैं। प्रतिबन्ध के विषय में कहते हैं– "उद्वेगः प्रतिबन्धो वा भोगो वा स्यातु बाधकः" सेवा में लौकिक जीव का

समाधान न करे, प्रभु अपना कार्य जानकर शीघ्र ही प्रसन्न होते हैं इसमें मुखरता दोष बहुत बड़ा है उसका विचार रखना लौकिक वार्ता कहते, सुनते समय आसुरावेश होता है इसलिये सेवामें किसी से संभाषण नहीं करे, लौकिक की चर्चा ही न करे, सेवा के विषय में बहुत नहीं बोले, किसी की झूंठी सच्ची नहीं करे, श्रीठाकुरजी की प्रीति से प्रभु का उपकार (टहल) मान कर करे, यह जानकर की प्रभु ने कृपाकर टहल करवाई है, सेवा करके लौकिक वैदिक में वासना नहीं करे। अपना मुख्य धर्म वैष्णव जानकर सेवा करे। वैष्णव होकर दुःख में व्याप्त न हो, श्रीठाकुरजी के वस्त्र आभरण, सामग्री स्वरूपात्मक जाने। प्रभु सम्बन्धी वस्तु को लौकिक न जाने। प्रभु को नये वस्त्र करा प्रसादी से अपना कार्य चलावे। बिना प्रसादी वस्त्र पहने तो श्रीठाकुरजी से बहिर्मुखता हो, चिन्ता कष्ट किसी बात को अपने मन मे न लावे। अपने भोग की निवृत्ति दुःख करके जाने, सुख में प्रभु का विस्मरण होता है इससे दुःख भला जिसमें प्रभु का स्मरण हो। वही बात कुन्तीजी ने कही है– "जो विपत्ति भली जामे आपको दर्शन होय" पुष्टिमार्गीय पंचाक्षर मंत्र का जप करना, भगवद् नाम के विस्मरण से आसुरावेश होता है। कालादिक खाये जाता है। श्रीठाकुरजी की बाल लीला, किशोर लीला और ब्रज सम्बन्धी लीला इसके गान सुनने से श्रीठाकुरजी शीघ्र प्रसन्न होते हैं। भगवदीय वैष्णव के आगे लीला का गान करना। साधारण कोई बैठा हो तो शिक्षा की बात कहना, शिक्षा के कीर्तन गान करना। भक्तिमार्ग का द्वेषी, बहिर्मुख बैठा हो तो अपने मन में गुणगान, भगवद् स्मरण करना, बाहर अपने धर्म को प्रकट नहीं करना। भगवदीय को सेवा स्मरण तथा भगवद् धर्म बढ़ाने का उपाय करना। काम, क्रोध, मद, मत्सरता,

लौकिक आवेश सर्वथा दूर करना। अपने पास तथा वैष्णव के पास लौकिक जीव आवे तो भगवद् धर्म में मन लगाने की शिक्षा देना और न माने तो कुछ भी नहीं बोलना। उससे बहुत प्रीति नहीं करना। भगवदीय से मिलने का उपाय करना। उनकी टहल (सेवा) कर प्रसन्नकर भगवद् धर्म पूछना। विश्वासकर पूछना, चलना, अगर भवगद् धर्म नहीं बने तो ताप–क्लेश करना। भगवदीय से लौकिक वार्ता नहीं करना। यह काल परम दुर्लभ है यह जानकर पुष्टिमार्ग का प्रकार पूछना और भगवदीय देशान्तर से आये हो तो उनसे मिलना। भगवदीय के हृदय में प्रभु विराजते हैं, उनके मिलने से हृदय पवित्र होता हैं सभी अपने हृदय में प्रभु कृपा करके सर्वथा पधारेंगे, यह भाव रखना। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने वैष्णवों को शिक्षा दी है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत पंद्रहमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–सोलहमां

अब और श्रीगोकुलनाथजी आज्ञा करते हैं जो वैष्णव देश, परदेश जावे तो जहां श्रीठाकुरजी बिराजते हों वहां चलकर जावे। वल्लभकुल बिराजता हो वहां नम्र होकर दर्शन करे। पीछे खान, पान करे। जहां अन्य मार्गीय पूजा हो वहां सर्वथा नहीं जावे। जहां श्रीपुष्टि पुरूषोत्तम बिराजते हों और श्रीवल्लभकुल बिराजते हों वहां खाली हाथ नहीं जावे।

नित्य नहीं बन सके तो जब जावे तब अथवा विदा हो तब यथा शक्ति फल, फूल पहुंचावे और भेट धरे, श्रीनाथजी के दर्शन में आलस्य नहीं करे।

प्रभु के दर्शन में आलस्य करने से अज्ञान बढ़े। प्रभु की सेवा कर रहे हों

और दर्शन हो चुकें तो अपराध नहीं। दर्शन से ज्ञान हो, ज्ञान हृदय में होने पर भगवद् स्वरूप हृदय में आरूढ़ होता है। अज्ञान से विषयादिक आसक्ति होती है जप करे तो किसी को नहीं बतावे। जप भाव है तथा अत्यन्त गोपनीय है।

शास्त्र में कहा है कि जप ऐसे करे कि होठ थोड़े भी नहीं खुलें। भीतर अनुभव कर जप करे, गौमुखी की माला बाहर नहीं निकाले। भीतर माला उलझ जावे तो ऊपर मनिका निकाल कर सुलझावे। माला इस प्रकार रखे कि वह उलझे नहीं। मनिका 108 रखे उनका जप करे, सुमेर का उल्लंघन नहीं करे। सुमेर का उल्लंघन करने से लीला से बाहर पड़े जप का फल तिरोधान हो जावे। जप के समय गौमुखी उपरणा से ढ़ककर जप करे। बोले नहीं। जप समय देह, मन को चंचल नहीं करे। नेत्र मुंदे रहें इससे लौकिक में दृष्टि नहीं पड़े। जप की सेवा साधारण लौकिक क्रिया नहीं जाने। अगर लौकिक क्रिया जाने तो उसमें प्रभु जप नहीं कराते। प्रतिबन्ध हो उस समय सेवा, जप का माहात्म्य नहीं भूले। माहात्म्य भूले तथा जप माहात्म्य को साधारण जाने तब आलस्य हो। आलस्य से अज्ञान, अज्ञान से दुर्बुद्धि, दुर्बुद्धि से संसारासक्ति और संसारासक्ति से श्रीठाकुरजी से बहिर्मुखता होती है।

यह कहे कि सेवा, दर्शन, जप, पाठ से क्या होगा और लौकिक बिना निर्वाह कैसे होगा, वैष्णव मिले तो पाखण्डी कहता है कि सेवा दर्शन से क्या होता है। मन लगेगा तब कार्य होगा वे तो यों ही पच मरेंगे। यह सिद्धान्त कर लौकिक में तत्पर हो, मन को वह भगवद् सेवा, कीर्तन, वार्ता में लगावे।

जीव की उलटी गति है भगवद धर्म में मन नहीं लगता है। इस प्रकार के दुष्ट सिद्धान्त से श्रीठाकुरजी अप्रसन्न होते हैं। भगवद् धर्म को

साधारण धर्म नहीं जाने। भगवद् धर्म को अलौकिक जाने तथा यह माने कि मेरी लौकिक देह से श्रीप्रभु कृपा कर अलौकिक सेवा कार्य कराते हैं। लौकिक जिह्वा से भगवद् नाम निकलता है। यह श्रीमहाप्रभुजी की बड़ी कृपा से प्राप्त हुआ है। लौकिक भी सधरी (सारी) योनि में सिद्ध होता आया है। प्रभु के स्वरूप का दर्शन, सेवा स्मरण, जप पाठ तो दुर्लभ है। इस माहात्म्य को जानता है तब प्रीति होती है। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति वैष्णव को शिक्षा दी है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत सोलहवां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–सत्रहमां

अब श्रीगोकुलनाथजी सत्रहवें वचनामृत में कहते हैं– जो वैष्णव हो वह पुष्टिमार्ग को सर्वोपरि जाने तभी पुष्टिमार्ग में रूचि होगी। सर्वोपरि मार्ग कब दीखे जब पुष्टिमार्गीय अनन्य भगवदीय का संग हो। भगवदीय को लौकिक नहीं जाने। भगवदीय के हृदय में प्रभु बिराजते हैं, भगवदीय की देह, इन्द्रिय, अलौकिक होती है। अलौकिक कैसे जाने? जो दुःख में विवेक, धैर्य, आश्रय दृढ़ हो और किसी से कपट, छल, निन्दा, किसी का बुरा न सोचे और चोरी तथा विषय लौकिक न करे, संयोग पाकर के अगर लौकिक विषय हो जाय तो बहुत खेद का अनुभव करे। ऐसे भगवदीय का संग हमेशा करे। जैसे श्रीठाकुरजी के दर्शन से हृदय पवित्र होता है। वैसे ही भगवदी के दर्शन से भी हृदय पवित्र होता है।

भगवदी के संग होने पर मन में आनन्द तथा भगवद् धर्म की स्फूर्ति होती है। भगवदी की सेवासे श्रीठाकुरजी बहुत प्रसन्न होते हैं। भगवदीय के

संग से असमर्पित तथा अन्याश्रय छूटता है। असमर्पित के लेने से आसुरावेश होता है। अन्याश्रय से वैष्णव धर्म से पतित हो जाता है जैसे व्यभिचारिणी का धर्म भ्रष्ट होता है। ये पुष्टिमार्ग में अंगीकार नहीं है। माया से अनेक दुःख प्राप्त होते हैं। वैष्णव को अपने अर्थ उद्यम नहीं करना। मन में यह विचारना कि व्यवहार हो तो वैष्णव सेवा, गुरू सेवा में कुछ अंगीकार हो यह भाव रखे। इसमें लौकिक व्यवहार बाधक न हो। अपने कुटुम्ब का भरण पोषण चलता रहे, भगवद् धर्म बढ़ता रहे तथा व्यवहार लौकिक करता रहे। अनिषिद्ध सत्य को करे। उसमें सारे दिन नहीं पचता रहे।

राजभोग के पीछे उत्थापन के भीतर इतने में करे कि आने वाला आ जावे। सेवा दर्शन नियम से करे। बहुत द्रव्य (धन) कमावे तो अपने घर पर श्रीठाकुरजी तथा गुरू को पधरावे। वस्त्र आभूषण भेट करे। अलौकिक मनोरथ में चित्त रखे। नाना प्रकार की सामग्री करके श्रीठाकुरजी को अरोगावे। इसके बाद वैष्णव को महाप्रसाद लिवावे। द्रव्य (धन) का संकोच हो तो भी श्रीठाकुरजी के पात्र, तथा आभरण वस्त्र इनमें अपनी सत्ता (अधिकार) न बतावे। इस प्रकार अपराध से डरता रहे। धैर्य रखे। राजा तथा कुटुम्ब के भय से अपने गुरू के घर श्रीठाकुरजी को पधराने पर सुख हो यह नहीं सोचे। वैभव अधिक नहीं बढ़ावे। नाना प्रकार की सामग्री भोग धर कर पीछे वैष्णव को महाप्रसाद लिवावे। श्रीठाकुरजी को अनेक प्रकार की सामग्री भोग धरने से द्रव्य (धन) की सफलता माने। इससे किसी प्रकार का दुःख नहीं माने। क्षण क्षण में प्रभु का नामोच्चारण करता रहे। मन में दया भाव रखे। अहंकारादि मन में नहीं रखे। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति कहा।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत सत्रहमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–अठारहमां

अब श्रीगोकुलनाथजी अठारहमां वचनामृत कहते हैं– जहां अपने मार्ग की निन्दा तथा श्रीवल्लभकुल की निंदा, अपने पुष्टिमार्ग की निन्दा, वैष्णव धर्म निन्दा हो, ऐसे दुष्ट जीव के पास कभी नहीं बैठे। दुष्ट जीव से आवश्यक कारण से मिलाप हो जावे तो अपने पुष्टिमार्ग की चर्चा चलावे, तो उसे गोपनीय रखनी। वहां प्रकाशित नहीं करनी। कान से अगर अपने प्रभु की निन्दा सुने या करे तो अपराध होता है यह बात शास्त्र सम्मत है शास्त्र यह भी कहते हैं कि निन्दा सुने करे उसकी जीभ काट लें। अपना वश नहीं चले तो जहां निन्दा हो रही है वहां से भाग जावे। कान से निन्दा नहीं सुने। हरिदास ने जेमल को शिक्षा दी उसमें कहा कि जहां तक हो ऐसे बहिर्मुख से मिलाप नहीं करे तथा जो इस मार्ग की निन्दा करे तथा बहिर्मुख हो, चाहे अच्छा ब्राह्मण हो, पंडित हो, या अच्छा क्षत्रिय हो किन्तु इस मार्ग का विरोधी हो उसे बहिर्मुख जाने। वह तो संसार से यों ही जायेगा। इस मार्ग में जिसकी अत्यन्त श्रद्धा है उसको देवी जीव जानना। जो जीव पुष्टिमार्ग में तो आया परन्तु इसको पुष्टिमार्ग का फल तो होगा तथा शरण मार्ग के प्रताप से मुक्ति मार्ग को पायेगा। संसारी है एतन्मार्ग में प्रीति है, साधारण है उनसे लौकिक वैदिक कार्यार्थ मिले। एतन्मार्ग के द्वेषी का सर्वथा त्याग करे। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति कहा है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत अठारहमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–उन्नीसमां

अब और श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट के प्रति उन्नीसमां लक्षण कहते हैं– जो वैष्णव हो के भगवदीय के पास आवे तो उसके संशय दूर कर पुष्टिमार्गीय भगवद् धर्म बढ़ावे, सुगम उपाय बतावे। उससे वैष्णव का मन बढ़े जैसा कि नव रत्न में कहा है– ''अज्ञानादथवा ज्ञानात्कृत मात्म निवेदनम्'' अज्ञानी शरण में आवे तो शरण आने से जीव का सर्व कार्य सिद्ध होता है और कहते हैं– ''निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशेर्जनैः'' शरण आने वाले वैष्णव का संग करे, संग से ज्ञान होगा। पीछे ताप, क्लेश को समझे। प्रथम कठिन उपाय कहने से शरण आने वाले जीव को बड़ा संदेह होगा, इसलिये धीरे धीरे सेवा स्मरण तथा लीला की भावना, ताप, स्नेह, बढ़ावे। भगवदीय जीव को अपना हितकारी माने। पुष्टिमार्ग के विपरीत धर्म बतावे उसको अपना शत्रु समझे। प्रेम दिशा बतावे उसका साथ करे। इस काल में बिना सत्संग बहुत दुःसंग मिलता है। इससे भगवद् धर्म का नाश होता है। इस काल में अनेक प्रतिबन्ध आकर पड़ते हैं इसलिये सत्संग हो तो भगवद् धर्म बढ़े, नहीं तो अन्याश्रय हो जाता है। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने आज्ञा की है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत उन्नीसमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–बीसवां

अब और श्रीगोकुलनाथजी आज्ञा करते हैं भगवदीय मन लगाकर भगवद् सेवा करे। राजभोग पीछे एकान्त में दो चार घड़ी जैसे सौकर्म हो उतने समय मानसी सेवा करे। नख से शिख पर्यन्त सारे श्रृंगार का ध्यान करे।

स्नान करके मंदिर में जाकर मानसी रीति से ऋतु की सामग्री कर अरोगावे। राजभोग पर्यन्त सब भावना करे। उसके पश्चात् महाप्रसाद ले। वैष्णव आया हो तो प्रथम उसको महाप्रसाद लिवावे, उसके पीछे मन में ध्यान कर महाप्रसाद लेवे। इस प्रकार भावना से उत्थापन से शयन पर्यन्त भावना करे। पीछे कुंज की भावना करे। यह कार्य अत्यन्त दुर्लभ है अपना मन लौकिक आसक्ति में हो मानसी ध्यान नहीं करे। यह कहे कि श्रीमहाप्रभुजी अपना दास जानकर कृपा करेंगे इस प्रकार की भावना करे। भावना में प्रथम प्रभु के श्रृंगार में मन लगावे। जन्म जन्म की अविद्या के कारण भगवद् स्वरूप में मन नहीं लगता है। श्रृंगार की अद्भुत छवि देखकर मन का श्रृंगार करेगा तब कार्य होता है। तभी कल्याण भट्ट ने प्रश्न किया कि महाराज श्रृंगार का कुछ वर्णन करिये।

अब आगे श्रीगोकुलनाथजी श्रृंगार का वर्णन करते हैं, प्रथम तो श्रीठाकुरजी के चणारविन्द में मन लगावे। श्रीठाकुरजी के परम कोमल, सुकुमार उनमें सोलह चिन्ह है। प्रथम वट के आरक्त (लाल) पत्र के समान वाम चरण पुष्टि, दक्षिण मर्यादा उनमें दश नखों की कांति चन्द्रमावत ताप, हार उनमें नूपुर आदि नख भूषण जडाऊ, उसके उपर जो हरिपायल, झांझर, कतड़ा सांकलां आदि, उसके ऊपर सुन्दर गुल्फ, उस पर घूंघरू, उस पर जंघा कदली स्तंभवत्, कटि केसरिवत् पतली, उस पर किंकिणी तथा पीताम्बर धोती, सूथन और त्रिवली और ह्रदय विशाल, उस पर चौकी, पदक, धुकधुकी, चम्पाकली, बंधी है। वैजयन्ती माला मोतिन की माला, कदम्ब के कुसुम की माला, ऊपर कंठसरी, सांकलां, पगलां, भुज में बाजु बन्ध–जड़ाऊ

फोंदना श्याम बलय, पोहोंची, कंकण, हस्तफूल, नखावली 10 और श्रीहस्त, उसमें लाल मुरली उस पर नग जड़ाऊ, उसके पास चिबुक हीरा के आभूषण, और अधर नीचे मन्दहास्य दंतकान्ति कोटि बिजलीवत् इस प्रकार आगे आरक्त (लाल) मुख, और नासिका में बेसर का मोती, दोनों नेत्रों में लावण्य कटाक्ष पांच प्रकार की चितवनि मनहरण, दोनों मृकुटि काम धनुषवत् सुन्दर भाल पर कुंकुम तथा केसर कस्तूरी का तिलक मोंह पर कुण्डल मकराकृत, मयूराकृत, कर्णफूल, ऊपर सुन्दर कणिका, मस्तक ऊपर मुकुट कुलह टिपारो, ग्वालपगा, भांति भांति के रंगों के जड़ाऊ, मणिमाला गुंजा और चरणाविंद में तुलसी गंध, दोनों और दामिनीवत् और भक्त अनेक प्रकार की लीला करें, इस प्रकार मन को स्वरूपासक्ति का बारंबार विचार करें, तब सहज में ध्यान हृदय से नहीं हटता। तब लीला की भावना हो, और नाना प्रकार की सामग्री तथा कुंज के उत्सादि की सामग्री करे, भावना करें इस प्रकार मानसी दण्डवत करे। तब प्रभु कृपा करके हृदय में पधारते हैं, तभी लौकिक में से देह छूटकर अलौकिक में लगती है तब रोमांचित होकर रूदन करे, इस प्रकार प्रेम की दशा होती है उसके भाग्य का कोई पार नहीं है। इस प्रकार से श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट को आज्ञा की है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत बीसमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–इक्कीसमां

अब श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट के प्रति इक्कीसमां वचनामृत कहते हैं– वैष्णव संयोग का स्मरण कर आनन्द पावे, कभी विरह कर दीन भाव को प्राप्त हो यह दैन्यता फल रूप है। दैन्यता से संतोष हो, इससे

श्रीठाकुरजी अत्यन्त प्रसन्न होते हैं, जब निःसाधन हो तब यह विचारिये–

"चित्तेन दुष्टो वचसापि दुष्ट, कायेन दुष्टः क्रियापि दुष्टः।

ज्ञानेन दुष्टा भजन दुष्टो ममापराधः कतिधा विचार्यः।।

इस प्रकार अपना समाधान कर, हीन जान मन में प्रभु का दास भाव रखे। अपने स्वरूप का बारंबार विचार करे। मैं किस गिनती में हूं। मेरी देह मल मूत्र से भरी है। जितनी वस्तु खोटी कही है उतनी मेरी देह में है। सो मैं और तो कहां देखूं हाड, मांस चर्म, थूंक से भरी है। अनेक द्वार से मल (गन्दगी) बहती है। ऐसा जो में महादुष्ट अज्ञानी हूं तथा काम, क्रोध मद मत्सरता से भरा हुआ हूं। मोह रूपी बेड़ी से बंधा हूं। अनेक दुःख संसार में भोगता हूं। ऐसा जो मैं हूं, मेरे को संसार में कहीं ठिकाना नहीं है। श्रीआचार्यजी बड़े दयालु हैं जिन्होंने मेरे जैसे पतित को शरण में लिया है, मैं पुष्टिमार्ग की शरण में आया हूं। शरण नहीं लेना तो मेरे जैसे अधम को नरक में भी स्थान नहीं मिलता।

श्रीआचार्यजी ने परम कृपा करके शरण लेके मेरा पूर्ण पुरूषोत्तम से सम्बन्ध कराया है। अब मेरा यह कर्तव्य है कि दृढ़ता पूर्वक श्रीपुरूषोत्तम के चरणार विन्द में मन लगा कर रहना। कोटि कोटि युग में भटकते महादुःखित हुवा हूं। इसलिये संसार से मन निकाल कर प्रभु के चरणारविन्द में मन रमाऊं। क्षण क्षण में सम्हाले तब दीनता उत्पन्न हो। सभी वस्तु में भगवद् इच्छा जाने और उद्यम हो उतना करे तथा धर्म नहीं जावे वह उपाय करे। धर्म गया तो सब गया सारा स्वार्थ गया, अपनी खरी मजूरी को श्रीठाकुरजी अंगीकार करते हैं यह अपने मन में निश्चय जाने। कोई भी वस्तु श्रीठाकुरजी का नाम लेकर लावे किन्तु श्रीठाकुरजी को समर्पित नहीं करे तथा उस वस्तु

का खान पान में उपयोग करे तो पात की हो। श्रीठाकुरजी की वस्तु अपने खान पान में लावे तथा भगवद् धर्म बेचकर लावे तो सारा भगवद् धर्म नष्ट हो जावे। ऐसे ही कीर्तन करके, देह निर्वाह चलावे तथा भगवद् धर्म को प्रकट कर अपना निर्वाह चलावे और गृह का पोषण करे उसको कुछ भी भगवद् धर्म फल नहीं हो। संसार में संसार की रीति के अनुसार चले। किसी का बुरा नहीं करे। लोग यह जाने कि यह संसारी है जहां एतन्मार्गीय वैष्णव मिले तब भगवद् धर्म की चर्चा एवं वार्ता करे। वैष्णव के आगे अपनी बड़ाई तथा अपने पुरूषार्थ को नहीं दिखावे। मैं कमाता हूं उससे मेरा गृहस्थाश्रम चलता है किन्तु यह विचार कि प्रभु बड़े हैं वे ही सब का पालन पोषण करते हैं। ज्ञानमार्ग में साधन में कष्ट, त्याग दृढ़ हो तब उद्धार होता है पुष्टिमार्ग में इस प्रकार चले तब गृहस्थी का उद्धार हो। संसारी के उद्धारार्थ यह मार्ग है उसमें उसमें त्याग, विवेक, हो तो फिर क्या कहना। यह ज्ञान तादृशी भगवदीय से होता है। इसका कोई दूसरा प्रकार नहीं है। इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने वैष्णव को आज्ञा की है।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत इक्कीसमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–बाईसमां

अब और श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट के प्रति आज्ञा करते हैं– वैष्णव मिथ्या भाषण सर्वथा नहीं करे। क्योंकि झूंठ बराबर पाप नहीं है। राजा युधिष्ठिर ने इतना कहा–

"जो नरो वा कुंजरो वा अश्वस्थामा मर्यो"

इतने ही पाप से नर्क का दर्शन करना पड़ा मात्र इतना कहने से मन

में बड़ा दुःख हुआ। जो नरक में पड़े उसके तो दुःख का पार ही नहीं, इसलिये मिथ्या भाषण सर्वथा नहीं करे। मिथ्या भाषण महा पाप है।

श्रीठाकुरजी की रसोई अन्य किसी के हाथ से नहीं करानी। अपने हाथ से भी रसोई पवित्रता से करे। रसोई का कार्य दुःख रूप नहीं माने। मेरे को श्रम होगा कैसे करूं, धुंवा नहीं सहा जाता है। इस पुष्टिमार्ग में तो श्रीठाकुरजी की रसोई की टहल (चाकरी) परम उत्तम है। जहां तक अपना शरीर चले वहां तक और के हाथ से रसोई न करावे। सेवा श्रृंगार तो करावे परन्तु रसोई अपने हाथ से ही करे। रसोई की अपरस अलग रखे। उसको उत्तम भगवदीय माने। शरीर जब नहीं चले तो और के हाथ रसोई करावे। किन्तु मन में ताप रखे, रसोई करके स्वयं खाकर नहीं बैठे। इससे दोष लगता है। इसलिये प्रथम वैष्णव को प्रसाद लिवावें, उसके पीछे आप प्रसाद लेवे। वैष्णव के सम्मुख दास भाव रखे। दास तो उसको कहो जो वैष्णव का झूंठा खावे। मार्ग की तो यह मर्यादा है तो भी श्रीठाकुरजी तथा श्रीवल्लभकुल की झूंठन खावे। इनके बिना अन्य की खावे तो भ्रष्ट हो जावे। धर्म से ऊपर वैष्णव की झूंठन लेने को कहा उसका निराकरण करते हैं कि मुख्य तो ब्रज भक्तन का स्वरूप गाय है इसलिये गाय को प्रथम महाप्रसाद खिलावे। फिर वैष्णव को खिलावे। उसके पीछे यह सब महाप्रसाद वैष्णव का झूंठा हुआ। वैष्णव की सामर्थ्य नहीं हो तो अपना कार्य जैसे तैसे चलावे। गाय का भाग तो अवश्य देवे। रसोई जब करे तब गाय, पृथ्वी, मनुष्य, देवता, पितृगण ये सब आशा करते हैं। जब गाय का ग्रास निकाले तब ये सब तृप्त होते हैं। इसलिये गाय का भाग अवश्य निकालना। यह वैष्णव और मनुष्य मात्र का धर्म है।

श्रीठाकुरजी की सामग्री में अपन्ना मन नहीं चलाना। अगर सामग्री

में मन चलावे तो महापापी होता है और श्रीठाकुरजी अरोगते नहीं है। सिद्ध सामग्री किसी को नहीं दिखावे। श्रीठाकुरजी के लिये फल, फूल की सामग्री की हो तो उसमें स्त्री, पुत्रादि को, और किसी को नहीं दिखावे। लौकिक रीति से किसी को देवे लेवे तो बहिर्मख हो जावे तथा इसके धर्म का नाश होवे श्रीठाकुरजी इसकी सामग्री अंगीकार नहीं करते। इसलिये भगवद् सेवा गोपनीय है। किसी को नहीं बतावे। सेवा प्रकट कर अपनी प्रतिष्ठा बढ़ावे तो उसको पाखण्डी कहना। उसकी सेवा में पुष्टिमार्ग का कुछ भी फल नहीं है। पाखण्ड करने वालों में लौकिकता आती है और लौकिक आवेश से बहिर्मुख होता है। तथा सेवा में प्रतिबन्ध पड़े। पाखण्ड का मूल लोभ है। लोभ जब छूटे तब पाखण्ड नहीं हो। लोभ के लिये ही जगत में पाखण्ड करते हैं वह पाखण्डी होता है। उसका अन्याश्रय हो जाता है।

अन्याश्रय करने से लोभ के वश से ज्ञान, विवेक का फल चला जाता है। ऐसे लोभी पाखण्डी के हृदय में श्रीठाकुरजी कभी नहीं बिराजते हैं। इसलिये सेवा थोड़ी ही करे, यथा शक्ति करे उसमें कोई बाधा नहीं है। थोड़े से ही भगवद् धर्म से उसके सारे कार्य सिद्ध (सफल) होते है। बहुत करे और पाखण्ड सहित करे तो उससे भगवद् धर्म नहीं बढ़े इसलिये अलौकिक रीति से सेवा करे। श्रीठाकुरजी के जानने से कार्य होगा, लोगों के जानने से कुछ सिद्ध नहीं होगा। वैष्णव का यह धर्म कि उत्तम सामग्री हो उसे श्रीठाकुरजी के समर्पित करे।

अपने पास द्रव्य (धन) नहीं हो तो मन से ताप करे और कहे कि यह तो प्रभु के लायक है जहां तक बने वहां तक उत्तम सामग्री तथा नूतन वस्त्र

और फल फूल थोड़ा ही बने तो अवश्य लावे। महंगा, सस्ता का विचार नहीं करे। श्रीठाकुरजी को तो स्नेह अत्यन्त प्रिय है। श्रीठाकुरजी को उत्तम वस्तु जहां तक बने तहां तक अंगीकार करावे। श्रीठाकुरजी को सुगन्धादिक अत्यन्त प्रिय है सो यथा शक्ति समर्पित करे। सुगन्धनित्य नहीं बने तो उत्सव पर अवश्य समर्पित करे। द्रव्य के अभाव में श्रुतिदेव ने मृत्तिका में पानी डालकर सुगंध के भाव से प्रभु को समर्पित किया था। इसलिये ऐसे भाव से सघरी (सारी) बात सिद्ध हो। श्रीठाकुरजी तुलसी अत्यन्त प्रिय है सो नित्य श्रीठाकुरजी के चरणारविन्द में नित्य नियम से विधिपूर्वक समर्पित करे। तुलसी समर्पित करते समय (बिरियां) गद्य का पाठ करना। श्रीठाकुरजी के चरणाविन्द का सम्बन्ध श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी द्वारा हुवा है इससे श्रीमहाप्रभुजी को सर्वोपरि जानो। तुलसी वृन्दा का स्वरूप है। पतिवृता है मध्य तुलसी के बीज जो हैं। उससे दृढ़ सम्बन्ध हुआ जानना। इसलिये तुलसी चरणों में समर्पित करनी। तब जिस दिन जिस समय श्रीब्रह्म सम्बन्ध हुआ उस समय अपने गुरू के सन्मुख जो श्रीठाकुरजी हैं उनका स्वरूप अपने श्रीठाकुरजी में जान समर्पित करे। किसलिये कि जो यह चरणारविन्द का दृढ़ सम्बन्ध हुआ है सो चरण स्पर्श करने से प्रीति बढ़े और प्रभु के चरणारविन्द में भक्ति है सो उसकी वृद्धि होती है इस प्रकार विचारे जो कहां भक्तिरूपी चरणारविन्द अलौकिक और मेरा हाथ लौकिक परन्तु श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी की कृपा से यह पदार्थ प्राप्त हुआ है। और प्रभु ने मेरे को चरण स्पर्श कराया है। वहां पूतना मोक्ष में श्रीआचार्यजी ने लिखा है कि पूतना ने सोलह हजार बालकों के प्राण लिये सो प्रभु ने पूतना को दुष्ट भाव से मोक्ष किया। बालक

भक्तिभाव से श्रीठाकुरजी के हृदय में रहे सो श्रीठाकुरजी ने यह विचार किया कि ये सोलह हजार भक्त हैं इनको पूतना राक्षसी के साथ से आसुरावेश हुवा है सो यद्यपि जगदीश श्रीठाकुरजी के हृदय में है तो भी आसुरावेश नहीं मिटा है इसलिये भक्तिरूप चरणारविन्द का तब सम्बन्ध हो तब आसुरावेश मिटे सो यह विचार कर ब्रह्म घाट की मृत्तिका खाई तथा बाल चरित्र दिखाये सो उन भक्तों के अर्थ आपने मुख से माटी (मिट्टी) खाई तब यह ऊखलमे चरित्र दीखा ब्रज के बालक तथा वेद रूप श्रीबलदेवजी ने श्रीयशोदाजी से कहा कि श्रीठाकुरजी ने मृत्तिका खाई है इतना सुनकर श्रीयशोदाजी श्रीठाकुरजी के पास आई और डराकर के कहा कि श्रीठाकुरजी ने वास्तव में माटी क्यों खाई है तब श्रीठाकुरजी ने जो कहा–

"मैया मैंने माटी नहीं खाई है"

यह लीला करके आपने अपनी पुरूषोत्तमता बनाई है श्रीबलदेवजी ईश्वर हैं तो भी नहीं जाने। श्रीठाकुरजी जितना बतावे उतना ही जाने। श्रीयशोदाजी को मुख खोल ब्रह्माण्ड दिखाया सो यह मृत्तिका का प्रसंग अत्यन्त गोपनीय है। इस प्रकार चरणामृत देकर सोलह हजार बालक पूतना के शुद्ध किये। उसके पीछे वृत चर्या प्रसंग में चीरहरण लीला की। चीर देकर चीर द्वारा इनके पुनः भाव को स्थापित किया। तब रास की अखण्ड रात्रि देखने की योग्यता आई तथा अलौकिक रात्रि दिखाई और वरदान दिये। जो शरद में रास लीला में जो दान हुवा। चरणारविन्द के सम्बन्ध में भक्ति सिद्ध हुई इसलिये चरणामृत लेना और तुलसी चरणारविन्द पर समर्पित करनी और चरण स्पर्श करना, इस प्रकार नियम रखे तब भक्ति बढ़े तभी पुष्टिमार्ग के फल की प्राप्ति होती है। तुलसी है वह जितना भगवद् धर्म में प्रतिबन्ध है उन सब

को दूर कर अलौकिक देह को देने वाली है। तुलसी का अलौकिक स्वरूप है। सो कहें कि पुष्टिमार्ग में मुख्य श्रीस्वामिनीजी बिना रंचक फल की प्राप्ति नहीं है सो तुलसी श्रीस्वामिनीजी के श्रीअंग की गन्ध है इसलिये श्रीठाकुरजी को अत्यन्त प्रिय है–

प्रियांग गंध सुरभि तुलसी चरण प्रिये।
समर्पयाम्यहं देहि हरे देह अलौकिकम्।।

इस भांति तुलसी बड़ा पदार्थ है और पतिव्रता पार्वती, जानकी इत्यादिक आदि दैविक पतिव्रता हो सो गोविन्द स्वामि ने गाया है–

"श्रीअंग प्रभृति निजी जगजुवती।
बार फेरिडारा तेरे रूपपर।।

इस प्रकार अलौकिक भाव जान तुलसी समर्पित करे और वृंदा रूप तो मर्यादा मार्ग की रीति से सब जगत में दिखाया है और जिस दिन श्रीठाकुरजी की सेवा चरण स्पर्श नहीं हो उस दिन को व्यर्थ गया ऐसा मानना। यह भाव अत्यन्त दुर्लभ है। दास भाव रखकर प्रभु की टहल (चाकरी) करनी। जिससे प्रभु प्रसन्न होवे स्नेह तो अत्यन्त दुर्लभ है और स्नेह बिना सारी क्रिया वृथा जाने, स्नेह ऐसा बड़ा पदार्थ है। सो इस प्रकार से भगवद् सेवा का नियम अपने पुष्टिमार्ग का धर्म भगवदीय से मिलकर पालन करना भगवद् धर्म से श्रीठाकुरजी में स्नेह हो तथा दुःसंग में अपना धर्म जाने में भय हो तथा सत्संग में सदा भक्ति हो तथा धर्म गया तब तो सब पाप रूप हुवा इसलिये भगवदीय प्रेम सहित मिलाप रखे उससे इसका कल्याण हो इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति वैष्णव को शिक्षा दी।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत बाईसमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–तेइसमां

अब और श्रीगोकुलनाथजी कल्याण भट्ट के प्रति कहते हैं– वैष्णव सखड़ी, अनसखड़ी का विचार रखे और नहीं समझता हो तो पुष्टिमार्गीय भगवदीय से रीति भांति पूछना, वैष्णव को सामग्री में और महाप्रसाद में विचार रखना सामग्री में श्रीठाकुरजी की सत्ता जानना, महाप्रसाद में वैष्णव की सत्ता जानना। सामग्री की सेवा पवित्र होकर खासा जल से हाथ धोकर विवेक विचार सहित स्पर्श करे अच्छा भगवदीय वैष्णव हो उसके हाथ सामग्री सिद्ध कराना। तथा टहल (चाकरी) करवाना और जहां तक बने वहां तक सामग्री सिद्ध का कार्य आप स्वयं ही करे। शाकादिक की सामग्री बाजार से मंगवाये तो नाम धारी से मंगवावे अन्य किसी से नहीं मंगवावे और बने जो सेवा छोटी मोटी आप स्वयं करे। कुटुम्ब में अत्यन्त प्रीति हो उसके पास से सेवा करावे। आप पवित्रता से रहे तथा पवित्र कार्य ही करे। रसोई शुद्ध पोत कर रखे। राजभोग पीछे पात्रादिक मांजकर धरे और सखड़ी में बड़ी पवित्रता रखे। इस बात का ध्यान रखें कि सामग्री एक दूसरे से छूवे नहीं। अपवित्रता से बुद्धि में हीनता आती है। इसलिये मलिनता से नहीं रहना, वस्त्र बहुत मैले नहीं रखना क्योंकि वैष्णव के पास वैष्णव बैठे तथा भगवद् वार्ता में यहां प्रभु पधारते हैं श्रीठाकुरजी को मैले वस्त्र से वास आती है इसलिये यह भाव रखकर वस्त्र उज्जवल रखे। भगवद मन्दिर में जब अपने को जाना पड़े तो ग्लानि आती है इसलिये फटे, मोटे की कुछ भी चिन्ता नहीं करनी अपने देह के लिये जैसा बने वैसा पहनना परन्तु बहुत मैला नहीं रखना, अपने देह पर किसी को दिखाने लिये अच्छा कपड़ा नहीं पहनना। यह दास का धर्म है। सूकर,

श्याल, गर्दभ, कुत्ता, धोबी, नीच जाति, चांडाल भंगी, चमार, आसुरी, सूत की, रजस्वला, छाप की (गरोली) सर्प इत्यादि का स्पर्श करे तो तत्काल स्नान करे। इनको डालने और छूने के स्पर्श से दिन में छूने पर दिन में ही स्नान करे, रात्रि को छूने पर रांत्रि में स्नान करे। यह वेद स्मृति शास्त्र में कहा है।

महाप्रसाद उत्तम (ठोर) स्थान पर लेवे। इस प्रकार आचार विचार से रहे। पुष्टिमार्ग की रीति अगर नहीं समझे तो भगवदीय वैष्णव से पूछे। उत्सवादि का लोप न करे क्योंकि उत्सवादिक जब आते हैं तब श्रीठाकुरजी को परम आनन्द आता है अब ये उत्सव आने वाला है और श्रीठाकुरजी का उत्सव नहीं करे तो श्रीठाकुरजी अप्रसन्न होने हैं इसलिये उत्सव यथा शक्ति सर्वथा करे और विधिपूर्वक करे। मन में दुःखी होकर नहीं करे किसी के आगे अपनी बड़ाई नहीं करे मैंने यह उत्सव किया है।

लौकिक वैदिक कार्य आ पड़ने पर भी उत्सव को नहीं टालना, अपने कार्य आ पड़े तो वैष्णव के घर या अपने घर वैष्णव के पास से उत्सव करावे। लौकिक कार्य के कारण अलौकिक श्रीठाकुरजी का उत्सव टाले तो श्रीठाकुरजी जीव के ऊपर अप्रसन्न होते हैं। इसलिये अलौकिक कार्य में मन रखे और लौकिक वैदिक आवश्यक हो वह करे। पुत्रादिक के ब्याह में मर्यादी के घर पुष्टिमार्ग की रीति से महाप्रसाद लेवे। अन्य मार्ग की रीति हो तो महाप्रसाद नहीं लेवे।

लौकिक कार्य करना हो तो पहले श्रीठाकुरजी के वस्त्र, सामग्री करे पीछे लौकिक कार्य करे। अगर जाति को भोजन करना हो तो प्रथम श्रीठाकुरजी के सामग्री करे पीछे श्रीठाकुरजी के भोग धरे उसके पीछे वैष्णव को प्रसाद लिवावे वैष्णव को प्रसाद लिवाये पीछे श्रीनाथजी की तथा गुरू की यथा शक्ति भेट

निकाले। श्राद्धादिक में वैष्णव को भोजन नहीं करावे। श्राद्ध में जो सदा जिसके घर प्रसादं लेते हो उनको प्रसाद लिवावे।

लौकिक भाव से ब्राह्मण और जाति को भोजन करावे। अलौकिक कार्य में वैष्णव को प्रसाद लिवावे। वहां किसी का प्रयोजन नहीं है। लौकिक में कोई जाति का बुरा माने तो उसको प्रसाद दे के प्रसन्न करे। अपने मार्ग की निंदा नहीं करावे, क्योंकि सुदृढ़ भक्ति नहीं होने से निंदा के कारण दुःख होता है। दृढ़ भक्ति वाले को तो कुछ लौकिक वैदिक की निंदा से कुछ भी नहीं होता है। उसको तो केवल अलौकिक से ही काम है। इस प्रकार से रहना और जहां तक भक्ति दृढ़ नहीं हो वहां तक माने कि मेरी भक्ति में कोई प्रतिबन्ध नहीं करे लौकिक वैदिक करे उसमें श्रीठाकुरजी की सेवा निर्विघ्नता से करे मन में खेद हो वह नहीं करे। पुष्टिमार्गीय से कोई बात अन्तराय (छिपाकर) नहीं रखे। छल–कपट भी भगवदीय से नहीं करे लौकिक वैदिक कार्य हीन जाने पुष्टिमार्ग की रीति सर्वोपरि जाने। इन इन्द्रियो के विषयादिक से श्रीठाकुरजी का आवेश चला जाता है। जैसा कि आगे कहते हैं–

"विषया क्रान्त देहानां नावेशः सर्वथा हरेः"

इस प्रकार श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी कहते हैं कि सेवा बराबर कोई धर्म नहीं है तथा सेवा बहुत ही कठिन है। वैष्णव विवेक विचार से सर्व कार्य करे। देश, काल, समय का विचार रखे बुरे के निकट नहीं जावे तथा उससे संभाषण भी नहीं करे। श्रीठाकुरजी के सेवा अगर बने तो उस समय को उत्तम माने।

ब्रजभूमि को उत्तम जाने। जहां श्रीपुरूषोत्तम की नित्य लीला स्थिति है। रात्रि को शयन करते समय प्रातः काल की सेवा का स्मरण करना और श्रीठाकुरजी के तथा श्रीमहाप्रभुजी के कीर्तन कर सोना, कीर्तन अगर नहीं आवे

तो श्रीमहाप्रभुजी का श्रीगुसांईजी का तथा गुरू का स्मरण करके सोना। इन सब के नाम स्मरण से सारे दिन खोटा, खरा बोला हो तो सब सुख रूप हो जैसे रात्रि को दूध लेने से सारे दिन का प्रसाद दूधवत् गुण करता है। सोते समय चरणामृत लेके सोना उससे दुःस्वप्न नहीं आते हैं। नींद तो मृत्यु के समान (बराबर) है श्वास आवे या नहीं आवे चरणामृत का सम्बन्ध मुख में बना रहे तो सर्वथा दुर्गति का भय नहीं रहे। इस प्रकार से वैष्णव इस काल में सावधान होकर रहे तब बचे इस प्रकार श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट के प्रति कहा।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत तेईसमां वचनामृत संपूर्ण।।

वचनामृत–चौबीसवां

अब श्रीगोकुलनाथजी चौबीसवां वचनामृत कहते हैं– वैष्णव यह भय रखे कि मेरी भगवद् सेवा में अन्तराय न हो, तथा यह भी भय रखे, सेवार्थ लौकिक कुटुम्ब का, पड़ोसी तथा राजा, देश काल का सारा दुःख सहे और यह जाने कि यह दुःख देह सम्बन्धी है इससे कोई क्या करेगा। मेरे को तो भगवद् सेवा चाहिये। सुख दुःख तो जगत में जहां जायेगा वहां भी प्राप्त होगा। किन्तु भगवद् सेवा तो बहुत दुर्लभ है, जब प्रभु अत्यन्त कृपा करें तब भगवदीय को सेवा का संयोग होता है। मन में यह भी जाने कि जहां तहां यह देह है वहां वहां यह दुःख है। लौकिक दुःख सुख मेरे साथ नहीं है। इसलिये दुःख सुख पाकर सहन करे तथा यह माने कि यह सेवा जन्म जन्म का कल्याण करती है इसलिये इस जन्म दुःख हुआ तो क्या, किन्तु सेवा तो होती है। लौकिक वैदिक के लिये देश देश में कितना दुःख सहन करते हैं

यह दुःख तो तुच्छ है। यहां अलौकिक भगवद् सेवा है उसके लिये जो दुःख हो तो उसे आनन्द पूर्वक सहन भगवद् सेवा मन लगाकर करना। श्रीठाकुरजी की सामग्री तथा नेग बांधे उसमें थोड़ा भी नहीं घटावे। अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही नेग बांधे। नेग बांधे पीछे नहीं करे तो श्रीठाकुरजी नेग बिन। दुःख पाते हैं। भक्तिमार्ग में नेग की आशा करते हैं लौकिक दृष्टान्त से इसको इस प्रकार जानना, जैसे किसी वैष्णव को महाप्रसाद लिवावे और कम रखे तो वह भूखा रहेगा, उस भाव से विचार कर नेग बांधे। सेवामें जो वैष्णव चतुर हो उसको सेवा में रखे। किसी को अच्छी सामग्री बनाना आता हो, किसी को बीड़ी किसी को माला गूंथना कोई सुगन्ध, अत्तर, फुलेल, अरगजा, चोवा और रीति भांति का जानकार हो उसको सेवा में रखे। कोई कुल्हे टिपारा, वस्त्र में बांध जानता हो उससे सेवा करावे। इस प्रकार प्रीति पूर्वक सेवा करे। जिसमें गुण बहुत हो तथा प्रीति थोड़ी भी नहीं हो उससे कुछ भी नहीं करावे। गुण भले ही थोड़े हों किन्तु श्रीठाकुरजी में प्रीति अधिक हो उससे सेवा करावे। अपने में कुछ गुण हो तथा वैष्णव श्रद्धापूर्वक पूछे तो उसे बतावे, किन्तु अपने गुणों को स्वयं ही जगह जगह कहता नहीं फिरे तथा अपने गुणों पर अभिमान नहीं करे। अपने से नवीनता वैष्णव में हो तो उसको अच्छा जानना अपने से पहले वैष्णव बनने वाले का आदर करना तथा यह मानना कि यह बड़ा तथा बड़भागी है प्रभु ने इसको बचपन से अंगीकार किया है भगवद् धर्म में छोटा बड़ा नहीं जानना श्रीठाकुरजी की कृपा को देखे कि शरण में आते ही अच्छी दिशा प्राप्त होती है किसी का सारा जीवऩ व्यतीत होने पर भी कुछ पता नहीं चलता हैं। इस मार्ग में बड़े छोटे का प्रमाण नहीं है इस

मार्ग में तो कृपा ही का विचार है। पुष्टिमार्ग की जो शरण में आवे उसी को स्वजाति जानना अन्य से अपना गोप्य (छिपाकर) रखना। पुष्टिमार्ग में जिस वस्तु को अंगीकार किया है उसी को समर्पित करना उसी का महाप्रसाद लेना। तरबूज, मूली, गाजर इत्यादि निषिद्ध है और वेद में भी वर्जित है उसको नहीं लेना।

शास्त्र में बेंगन निषिद्ध है परन्तु इस पुष्टिमार्ग में श्री जगन्नाथजी की आज्ञा से लेते हैं। इसलिये भोग धरकर लेवे। निमक डाला शाग सखड़ी कहा है। खीर को भी सखड़ी कहा है किन्तु उनको अनसखड़ी की रीति से करे। शाकादिक करें अग्नि से उतारकर पीछे नमक डाले। कोई भी सामग्री थोड़ी बने उसकी चिन्ता नहीं किन्तु सामग्री पुष्टिमार्ग की रीति से सिद्ध करे।

पुष्टिमार्ग की रीति बहुत बड़ी है। दूसरे के मार्ग कि क्रिया से कोई फल नहीं है। इसी को श्री गीताजी में कहा है–

''स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः''

परधर्म भय उत्पन्न करता है उससे कुछ कार्य नहीं होता है। कार्य पुष्टिमार्ग के प्रमाण अनुसार करे भले ही थोड़ा ही करे। श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी का आश्रय लेकर धर्म करे तो उससे प्रभु प्रसन्न होते हैं। उत्साह से जितना बने उतना ही करे। किसी की लौकिक प्रतिष्ठा देखकर उसकी बराबरी नहीं करे। श्रीआचार्यजी की मर्यादा से श्रीठाकुरजी प्रसन्न होते हैं यदि श्रीठाकुरजी प्रसन्न नहीं होते हैं तो इसके करने से क्या? प्रभु को तो एक मनकी अपेक्षा है श्रीठाकुरजी के तो किसी बात की कमी नहीं है। वैष्णव का जैसा भाव होगा वैसे प्रभु अंगीकार करेंगे तथा वैसा ही दान करेंगे। वैष्णव

अपनी योग्यता छोड़ श्रीआचार्यजी श्रीमहाप्रभुजी का आश्रय करे। लौकिक वैदिक में लोक निष्ठा दिखाकर अपने धर्म को प्रकट नहीं करे। लौकिक व्यवहार बने जो करते जाना, उसमें भगवद् इच्छा से जो आय प्राप्त हो उसमें से श्रीनाथजी का अंश प्रथम निकाले उसके बाद गुरू अंश निकाले। दोनों थैलियां अलग करके धरता जाय। इन दोनों थैलियों को ग्राम के किसी वैष्णव के पास धर देवे। इस द्रव्य को अपने पास नहीं धरे क्योंकि क्या पता किसी समय कैसी कठिनता आ पड़े तथा क्षण भर में धर्म छूट जाय, यह द्रव्य किसी भी समय भगवद् धर्म नाश कर देता है इसलिये गांव में कोई प्रामाणिक वैष्णव हो उसके घर यह द्रव्य धर दे। जब श्रीजी का भेटिया आवे तब उसे तत्काल दे देवे।

यह विचार नहीं करे कि में ही जाऊंगा तब ले जाऊंगा। गुरू अगर गांव में हो तो गुरू के लिये निकाली भेंट भेंट कर आवे। वहां गुरू नहीं हो तो विश्वास पात्र वैष्णव के साथ गुरू भेंट भिजवादे। क्योंकि इस काल में द्रव्य और परस्त्री ये भगवद् धर्म का नाश करते हैं। श्रीभागवत् में कहा है कि काष्ठ (लकड़ी) की पूतली का संग नहीं करना क्योंकि चित्र लिखी पूतली से भी मन में विकार पैदा होता है। इसलिये पराई स्त्री का सर्वथा त्याग करना। उसको काल स्वरूप जानना। श्रीगोवर्द्धननाथजी के तथा अपने गुरू के दर्शन की सदा सर्वदा आरती (इच्छा) रखना। यह नहीं जानना कि मैं दो चार बार हो आया हूं। ज्यों ज्यों दर्शन करे त्यों त्यों ताप करना यह भगवद् कृपा माने कि श्री ठाकुरजी ने दर्शन दिये हैं। इसी प्रकार श्रीयमुनाजी के जल पान का भी ताप रखना और श्रीगोवर्द्धननाथजी के टहलवा ब्रज में रहते हैं उनमें दोष भाव नहीं रखना क्योंकि वैदिक शास्त्र में कहा कि यह जगत

श्रीठाकुरजी का क्रीड़ामय है यह सारा जगत् काष्ठ की पुतली की तरह है प्रभु उनको नचाते हैं वैसे वे नाचते हैं।

किसी का दोष नहीं देखे अच्छी बात को समझावे। अगर नहीं समझे तो इसे भगवद् इच्छा जाने इसमें दोष बुद्धि नहीं रखे क्योंकि वे ब्रज के सम्बन्धी हैं, प्रभु विचारे बिना प्रभु के गांव में कैसे रहें। इसलिये उनको अलौकिक समझे। उनकी सेवा टहल अपने हो उतनी करें। आप उत्तम स्थल में अपराध का भय रखे। ठौर (स्थान) का अपराध उत्तम स्थल पर जाने से छूटता है। उत्तम स्थल का पाप बज्र लेप हो जाता है वह नहीं छूटता है इसलिये अपराध का सर्वथा भय रखे। उत्तम स्थल का भय रखकर खोटी बात नहीं करे तथा कानों से सुने भी नहीं तब भाव दृढ़ होता है। भाव की दृढ़ता से प्रभु प्रसन्न होते हैं।

श्रीभागवत् के एक या दो अध्याय का पाठ नित्य करना। इस मार्ग के ग्रन्थों की टीका के श्रवण किये बिना प्रभु में मन नहीं लगता है। पुष्टिमार्ग ग्रन्थों के बिना सिद्धान्त को नहीं जान सकता है। वैष्णव के मुख से सुने तब श्रीआचार्यजी तथा श्रीगुसांईजी के पुष्टिमार्ग के सिद्धान्त तथा सेवा क्रिया का संपूर्ण अलौकिक ज्ञान होता है तब प्रीति बढ़ती है। प्रीति पैदा होने पर इसका संपूर्ण कार्य सिद्ध होता है।

श्रीसुबोधिनीजी श्रीवल्लभ कुल पढ़े उसको सुने तथा निवेदनी के मुख से श्रवण करे तथा श्रीठाकुरजी की लीला का भाव अपने हृदय में शुद्ध धारण करे क्योंकि भगवद् माहात्म्य जाने बिना प्रीति नहीं होती है। श्रवण किये बिना ज्ञान नहीं होता है इसलिये भगवद् वार्ता अवश्य सुने। श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी

ने नवरत्न में कहा कि भगवदी के संग बिना तथा श्रवण बिना ज्ञान नहीं होता है। ज्ञान नहीं हो तो प्रीति नहीं होती है। प्रीति नहीं होने से प्रभु प्रसन्न नहीं होते हैं जैसे जगत में द्रव्य का ज्ञान होता है इस कारण द्रव्य से प्रीति है।

द्रव्य के गुण के ज्ञान से संसार में सर्वज्ञान होता वैसे ही प्रभु के गुण गान से प्रभु का ज्ञान होता है वह सर्वोपरि जान कर प्रीति होती है। संपूर्ण अलौकिक कार्य सिद्ध होते हैं। इस मार्ग के अष्टछाप के कीर्तन का गान करे तथा सुनने में प्रीति रखे क्योंकि जो पुष्टि लीला के दर्शन अष्टछाप में है। अन्य मार्ग के कीर्तन युग युग में अंश कला से प्रकट होते हैं उनके हैं इसलिये यह जानकर अन्य मार्गीय के कीर्तन नहीं सुने यह जानकर कोई अन्य मार्गीय एतन्मार्ग के कीर्तन अष्टछाप के गावें उनको नहीं सुने। जैसे यमुना जल और के पात्र में हो तो पुष्टिमार्गीय उस जल को कैसे पीवे? अगर उसको पीवे तो भ्रष्ट हो जाता है, वैसे ही अष्टछाप के कीर्तन वैष्णव के मुख से सुने और श्रीठाकुरजी की सेवा तथा दर्शन करके निकले, तब पीठ फेर कर बाहर नहीं निकले क्योंकि उससे अपराध होता हैं इसलिये दण्डवत् करे किन्तु श्रीठाकुरजी के पीठ पीछे दंडवत् नहीं करे। वहां बैठे ही नहीं क्योंकि पीठ पीछे बैठे तो श्रीठाकुरजी से बहिर्मुखता होती है। दामोदर लीला के प्रसंग में श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी कहते हैं कि श्रीयशोदाजी श्रीठाकुरजी को पकड़ने को आई तब श्रीठाकुरजी भागे ज्यों ज्यों पीठ दीखी त्यों त्यों क्रोध बढ़ा और स्नेह छूटा तब श्रीठाकुरजी बंधे इसलिये संमुख बैठना, गुरू का स्वरूप अपने हृदय में रख दंडवत् कर विज्ञप्ति करे कि महाराज में संसार समुद्र में डूब रहा हूं इसलिये आप बांह पकड़कर निकालो तो निकल जांऊ।

मेरी संसार समुद्र से निकलने की सामर्थ्य नहीं है इसलिये मैं आपकी शरण हूं। आप की सेवा का चोर हूं तथा साधन से हीन हूं। आपके शरण तथा आश्रय बिना कोई उपाय नहीं है। मेरे जैसे पतित को कृपा कर उद्धार करने वाले आप ही हों तथा आप ही को कृपा करनी है तभी प्रभु प्रसन्न होंगे। अपने घर में श्रीठाकुरजी बिराजते हैं उनमें गुरूभाव तथा प्रभु भाव दोनों ही रखे, मुखारविन्द रूप श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी इस भाव से पुष्टिमार्ग में भाव ही मुख्य है उसको लौकिक दृष्टान्त में कहते हैं। एक देह सम्बन्धी है तथा एक भाव सम्बन्धी है। अपनी बेटी वह देह सम्बन्धी है, बहु है वह भाव सम्बन्धी है अपनी बेटी अपने देह से उत्पन्न हुई है परन्तु पराये घर जाकर पाली पोषी है वह अपने घर की नहीं है। बहु किसी अन्य की बेटी है वह भाव सम्बन्ध से घर में आई है और मालिकनी हुई क्योंकि वहां भाव सम्बन्ध है वह दृढ़ है।

देह सम्बन्धी याद व उनका क्षय हुआ और भाव सम्बन्धी जो ब्रजभाव हैं उनको अपनत्व दिया उसी तरह श्रीआचार्यजी ने पुष्टिमार्ग प्रकट कर जीव का ब्रह्मसम्बन्ध कराया और भाव सम्बन्ध दृढ़ कर दिया। यह ऐसा दान हुआ है परन्तु पतिव्रत धर्म में चले तो प्रभु प्रसन्न हों वैसे ही वैष्णव साक्षात् श्रीपुरूषोत्तम को अपना पति जाने और इनकी ही सेवा स्मरण में तन, मन, धन समर्पण करे तो प्रभु प्रसन्न हों। इस प्रकार कृपा करके श्रीगोकुलनाथजी ने कल्याण भट्ट से कहा है और यह आज्ञा की है कि यह पुष्टिमार्ग का सिद्धान्त अत्यन्त गोपनीय है। भगवदीय हो उसे कहना। यह हमारी शिक्षा है इसको जानोगे।

।। श्रीगोकुलनाथजी कृत चौबीसमां वचनामृत संपूर्ण।।

चि.गो. श्री 105 श्री भूपेश कुमार जी
(श्री विशाल बावा)

श्री गोकुलनाथ जी के वचनामृत / तीज तेरस एक, पञ्चमी पूनो एक

पौ.	मा.	फा.	चै.	वै.	ज्ये.	आ.	श्रा.	भा.	आ.	का.	मृ.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११

महिना तिथिन के फल

बहोत सुख होय क्लेश न होय अर्थ पूर्ण होय

महाभारत होय, अशुभ, जीवनाश होय

अर्थपूर्ण होय, कामना पूर्ण होय

क्लेश होय, जीव नाश होय कुशल सूं घर नहीं आवे

वस्तु लाभ होय मित्र मिले, व्याधि मिटे

महाचिन्ता होय, वियोग होय कदाचित् घर आवे

सौभाग्य पावे रत्न सहित भलीभांति सूं घर आवे

मिलवो न होय बहुत बुरो होय जीवनाश होय

आशा पूर्ण होय सौभाग्य पावे, कामना सिद्ध होय

सौभाग्य पावे दिन बहुत लगे, कुशल सूं घर आवे

क्लेश होय, जीवनाश नहीं सौभाग्य पावे नहीं

मार्ग में सिद्धि मित्र मिले, विघ्न मिटे, धन को लाभ होय

टिप्पणी व पुस्तके मिलने का स्थान :-

श्रीगोवर्द्धन पुस्तकालय धोली पटिया, श्रीनाथजी का मन्दिर, नाथद्वारा (राज.)

चौधरी ऑफसेट प्रा. लि. - 0294-2584071, 2485784 / 2671